Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग (UPPSC)

सामाजिक न्याय एवं समाज कल्याण

(उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: UPM04

दृष्टि The Vision

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग (UPPSC)

सामाजिक न्याय एवं समाज कल्याण

(उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

दृष्टि The Vision

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPPCS DLP विषय सूची (Contents)

1. सामाजिक न्याय तथा सामाजिक कल्याण **7-24**

1.1 सामाजिक न्याय का अवधारणात्मक विवेचन 7

1.2 सामाजिक कल्याण का अवधारणात्मक विवेचन 10

1.3 असुरक्षित, हाशिये पर स्थित एवं उपेक्षित समूह/समुदाय 14

1.4 भारत में असुरक्षित, हाशिये पर स्थित तथा उपेक्षित समूह 17

1.5 असुरक्षित, हाशिये पर स्थित तथा उपेक्षित समूहों के साथ भेदभाव 19

1.6 भारत में हाशिये पर स्थित प्रमुख समूहों के समक्ष असुरक्षा 20

2. भारत में महिलाओं एवं बच्चों के संरक्षण हेतु प्रावधान **25-70**

2.1 भारतीय समाज में असुरक्षित समूह के रूप में महिलाएँ 25

2.2 भारत में महिलाओं हेतु महत्त्वपूर्ण संवैधानिक एवं विधिक प्रावधान 25

2.3 भारत में महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा के लिये कानून एवं विधायन 26

2.4 भारत में महिलाओं के कल्याण हेतु अन्य महत्त्वपूर्ण कानून एवं विधायन 34

2.5 भारत में महिला अधिकारों की निगरानी के लिये एजेंसियाँ एवं संस्थाएँ 38

2.6 महिलाओं हेतु केंद्र एवं राज्यों की कल्याणकारी योजनाएँ 40

2.7 भारत में बच्चों की असुरक्षा 47

2.8 भारत में बच्चों के संरक्षण संबंधी संवैधानिक प्रावधान 49

2.9 भारत में बाल अधिकारों के संरक्षण हेतु विधियाँ एवं विधायन 50

2.10 भारत में बाल अधिकारों के संरक्षण हेतु अन्य प्रमुख कानून और विधायन 55

2.11 भारत में बाल अधिकारों की निगरानी हेतु एजेंसियाँ तथा संस्थाएँ 56

2.12 केंद्र व राज्यों की बच्चों के कल्याण संबंधी योजनाएँ 57

2.13 उत्तर प्रदेश में महिला एवं बाल अधिकारों की निगरानी हेतु एजेंसियाँ व संस्थाएँ 65

2.14 उत्तर प्रदेश में महिला एवं बच्चों के कल्याण संबंधी योजनाएँ 67

3. अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों तथा अल्पसंख्यकों के संरक्षण हेतु प्रावधान **71-128**

3.1 भारत में अनुसूचित जातियों की सुरक्षा हेतु संवैधानिक प्रावधान 71

3.2 भारत में अनुसूचित जातियों/शोषित तबकों से संबंधित संस्थाएँ एवं एजेंसियाँ 76

3.3 केंद्र और राज्य सरकारों की अनुसूचित जातियों के लिये कल्याणकारी योजनाएँ 79

3.4 भारत में अनुसूचित जातियों के विकास हेतु महत्त्वपूर्ण छात्रवृत्तियाँ 81
3.5 अन्य पिछड़े वर्गों एवं अल्पसंख्यकों के संरक्षण हेतु प्रावधान 82
3.6 अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों हेतु सकारात्मक कदम 84
3.7 अल्पसंख्यकों का कल्याण 85
3.8 अल्पसंख्यकों से संबंधित कार्यक्रम एवं संस्थाएँ 87
3.9 अनुसूचित जनजातियों का कल्याण 95
3.10 भारत में अनुसूचित जनजातियों हेतु संवैधानिक संरक्षण एवं प्रावधान 96
3.11 भारत में अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण हेतु कानून और विधायन 97
3.12 भारत में अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों की निगरानी हेतु संवैधानिक निकाय 102
3.13 जनजातियों के उत्थान/विकास हेतु अन्य प्रयास 104
3.14 केंद्र व राज्यों की अनुसूचित जनजातियों हेतु कल्याणकारी योजनाएँ 105
3.15 वर्तमान परिदृश्य : अनुसूचित जाति एवं जनजाति 110
3.16 उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जातियों के कल्याण हेतु संस्थाएँ तथा योजनाएँ 113
3.17 उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जनजातियाँ एवं इनके कल्याण हेतु संस्थाएँ तथा योजनाएँ 117
3.18 उत्तर प्रदेश में अल्पसंख्यकों के कल्याण हेतु संस्थाएँ तथा योजनाएँ 119
3.19 उत्तर प्रदेश में अन्य पिछड़ा वर्ग के कल्याण हेतु संस्थाएँ तथा योजनाएँ 124

4. भारत में श्रमिकों के संरक्षण हेतु प्रावधान 129-153
4.1 भारत में श्रमिक 129
4.2 भारत में श्रमिक अधिकारों की सुरक्षा हेतु संवैधानिक प्रावधान 130
4.3 श्रमिक कल्याण हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण कानून एवं विधायन 131
4.4 श्रमिकों के कल्याण हेतु प्रमुख योजनाएँ 135
4.5 भारत में बाल श्रमिकों के लिये मुख्य कानून एवं विधायन 136
4.6 महिला श्रमिकों के लिये मुख्य कानून एवं विधायन 139
4.7 बँधुआ श्रमिकों हेतु कानून और विधायन 139
4.8 श्रमिकों के कल्याण की निगरानी करने वाली एजेंसियाँ एवं संस्थाएँ 141
4.9 उत्तर प्रदेश में श्रमिकों की स्थिति 143
4.10 उत्तर प्रदेश में श्रमिकों के कल्याण हेतु संस्थाएँ एवं योजनाएँ 144

5. नि:शक्तता से पीड़ित लोगों के संरक्षण हेतु प्रावधान 154-177
5.1 विकलांग से दिव्यांग 154
5.2 नि:शक्तता के कारण 155
5.3 भारत में नि:शक्तजन और जनगणना–2011 156
5.4 भारत में नि:शक्तजनों की समस्याएँ 157

5.5 भारत में नि:शक्तजनों के कल्याण हेतु संवैधानिक प्रावधान 158
5.6 भारत में नि:शक्तजनों के संरक्षण हेतु कानून एवं विधायन 159
5.7 नि:शक्तजन अधिनियम, 1995 के क्रियान्वयन हेतु कुछ योजनाएँ 162
5.8 भारत में मानसिक रोगी 167
5.9 उत्तर प्रदेश में नि:शक्तजन 171
5.10 उत्तर प्रदेश में नि:शक्तजनों से संबंधित संस्थाएँ 171
5.11 उत्तर प्रदेश में नि:शक्तजनों से संबंधित योजनाएँ/कार्यक्रम 174

6. भारत में अन्य असुरक्षित समूहों के संरक्षण हेतु प्रावधान 178-196
6.1 प्रवासी कामगार 178
6.2 उत्तर प्रदेश से प्रवासन 179
6.3 प्रवासी श्रमिकों के परिवारों हेतु कानून एवं विधायन 180
6.4 सेक्स वर्कर्स, गंभीर रोगों से ग्रसित रोगी 181
6.5 भारत में LGBT समूह के साथ होने वाले भेदभाव 182
6.6 भारत में HIV/AIDS रोगियों के साथ भेदभाव एवं असुरक्षा 184
6.7 भारतीय समाज में वरिष्ठ नागरिक समूह 188
6.8 मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन रोकथाम 193

7. सरकारी नीतियों और विभिन्न क्षेत्रों में विकास से संबंधित विषय 197-217
7.1 भारत में सामाजिक न्याय एवं कल्याण हेतु नीतिगत प्रयास 197
7.2 सामाजिक सहायता के लिये प्रमुख योजनाएँ 199
7.3 उत्तर प्रदेश सरकार की महत्त्वपूर्ण योजनाएँ 215

8. विकास, रणनीति और चुनौतियाँ 218-247
8.1 विकास का परिचय 218
8.2 विकास प्रक्रिया तथा विकास उद्योग 222
8.3 विकास के स्वरूप 222
8.4 गैर-सरकारी संगठन 224
8.5 उत्तर प्रदेश में गैर-सरकारी संगठन 229
8.6 स्वयं सहायता समूह व विकास प्रक्रिया में उनकी भूमिका 230
8.7 उत्तर प्रदेश में स्वयं सहायता समूह 234
8.8 लोकोपकारी संगठनों की भूमिका 235
8.9 दानकर्त्ताओं की भूमिका 237
8.10 सहकारी समितियाँ 238
8.11 उत्तर प्रदेश में सहकारिता 243

9. सामाजिक क्षेत्रक एवं सेवाओं का विकास और प्रबंधन **248-287**

9.1 सामाजिक क्षेत्रक 248

9.2 भारत में सामाजिक क्षेत्रक/सेवाओं की नीति 252

9.3 स्वास्थ्य क्षेत्र 254

9.4 मानव संसाधन 267

9.5 नवाचार 268

9.6 उत्तर प्रदेश में मानव संसाधन विकास हेतु किये गए प्रयास 272

9.7 उत्तर प्रदेश में कौशल विकास हेतु किये गए प्रयास 273

9.8 शिक्षा 275

9.9 उत्तर प्रदेश में शिक्षा 285

10. गरीबी और भूख से संबंधित विषय एवं राजनीतिक व्यवस्था के लिये इनका निहितार्थ **288-310**

10.1 कुपोषण 288

10.2 भारत में बच्चों व महिलाओं को कुपोषण से बचाने की रणनीति 292

10.3 उत्तर प्रदेश में कुपोषण की समस्या एवं समाधान 294

10.4 भारत में भूख 295

10.5 खाद्यान्न प्रबंधन में सुधार 302

10.6 सामाजिक-आर्थिक जनगणना-2011 304

10.7 भारत में भुखमरी से निपटने से संबंधित कार्यक्रम/योजनाएँ 305

10.8 आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 309

अध्याय
1

सामाजिक न्याय तथा सामाजिक कल्याण (Social Justice and Social Welfare)

आधुनिक काल में जॉन रॉल्स और अमर्त्य सेन जैसे विचारकों ने 'सामाजिक न्याय' को एक प्रमुख अवधारणा बना दिया है। वर्तमान लोक-कल्याणकारी राज्य का मूल लक्ष्य भी 'सामाजिक न्याय' की स्थापना करना है। सामाजिक न्याय से आशय एक ऐसे न्यायपूर्ण समाज की स्थापना से है जिसमें सामाजिक-आर्थिक विषमताएँ न्यूनतम हों, समाज 'समावेशी' हो और संसाधनों का वितरण सर्वमान्य स्वीकृति के आधार पर हो। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए समाज के प्रत्येक तबके के लिये समान अवसर सुनिश्चित करने के लिये सामाजिक-आर्थिक कल्याण की न केवल कई योजनाएँ सरकार द्वारा चलाई जा रही हैं, बल्कि अनेक नीतिगत प्रयास भी किये जा रहे हैं।

1.1 सामाजिक न्याय का अवधारणात्मक विवेचन *(Conceptual Interpretation of Social Justice)*

सामाजिक न्याय का सिद्धांत *(Principle of Social Justice)*

'सामाजिक न्याय' शब्द का प्रयोग पहली बार 1840 में इटली के एक पादरी लुइगी तपारेली द एज़ेग्लिओ (Luigi Taparelli d'Azeglio) द्वारा किया गया था, जबकि इस शब्द को पहचान 1848 में एंटोनियो रोस्मिनी सरबाली (Antonio Rosmini Serbali) ने दिलाई।

सामाजिक न्याय का उद्देश्य राज्य के सभी नागरिकों को सामाजिक समानता उपलब्ध कराना है। समाज के प्रत्येक वर्ग के कल्याण के लिये व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आज़ादी आवश्यक हैं। भारत एक कल्याणकारी राज्य है और यहाँ सामाजिक न्याय का मुख्य उद्देश्य लैंगिक, जातिगत, नस्लीय एवं आर्थिक भेदभाव के बिना सभी नागरिकों की मूलभूत अधिकारों तक समान पहुँच सुनिश्चित करना है।

मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच प्राथमिकता को लेकर विवाद रहा है। 20वीं सदी में 'सामाजिक न्याय' की अवधारणा के तीव्र विकास के साथ ही उपरोक्त दोनों मूल्यों में व्याप्त भिन्नता और भी अधिक स्पष्ट हुई है। अत: एक ओर, जहाँ पश्चिमी पूंजीवादी देशों ने अपनी संवैधानिक योजना में व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्रमुखता दी, वहीं दूसरी ओर, समाजवादी देशों ने सामाजिक न्याय को सर्वप्रमुख माना। जबकि समकालीन राजनीतिक व्यवस्थाओं ने प्रमुखतया उदारवादी लोकतंत्र को अपनाते हुए 'सामाजिक न्याय व व्यक्तिगत स्वतंत्रता' के मध्य बेहतरीन सामंजस्य स्थापित किया है। भारतीय राजव्यवस्था में उदारवादी राजनीतिक लोकतंत्र के साथ-साथ समाजवादी आदर्शों को भी अपनाया गया है, और इसे ध्यान में रखते हुए ही संविधान की प्रस्तावना में 'सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय' का उल्लेख किया गया है। भारत के संविधान निर्माताओं ने 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' और 'सामाजिक न्याय' में संतुलन स्थापित करने के उद्देश्य से संविधान के भाग III में मौलिक अधिकारों के रूप में व्यक्तिगत स्वतंत्रता को और भाग IV में राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों के अंतर्गत सामाजिक न्याय को सुनिश्चित किया है।

'सामाजिक न्याय' शब्द को कठोर प्रतियोगिता के विरुद्ध कमज़ोर, वृद्धों, दीन-हीनों, महिलाओं, बच्चों और अन्य सुविधा वंचितों को राज्य द्वारा संरक्षण के अधिकार के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि यह सिद्धांत एक विषमतामूलक समाज को 'सर्वसमावेशी समाज' के रूप में परिवर्तन में एक मार्गदर्शक का कार्य करता है। उल्लेखनीय है कि सामाजिक न्याय की संकल्पना का आविर्भाव सामाजिक अन्याय की पृष्ठभूमि में हुआ है। यह सबके लिये समान विकासीय दशाओं तथा प्रतिष्ठा और अवसर की समानता सुनिश्चित करता है। सामाजिक न्याय न केवल एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना करता है, बल्कि लोगों में विद्वेष और असामंजस्य को भी समाप्त करता है। अत: भारत में एकता और सामाजिक स्थायित्व सुनिश्चित करने की दृष्टि से सामाजिक न्याय का अत्यधिक महत्त्व है। यद्यपि सामान्य हित के स्वीकृत मानक स्थापित करने के लिये न्याय का विधिसम्मत होना आवश्यक है।

भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश के. सुब्बाराव के अनुसार, सामाजिक न्याय को हम व्यापक और सीमित दो अर्थों में समझ सकते हैं। सीमित अर्थों में इसका तात्पर्य लोगों के व्यक्तिगत संबंधों में अन्याय को समाप्त करने से है, जबकि व्यापक अर्थों में

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- भारत ने अर्थव्यवस्था में उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण की नीति को 1991 से अपनाया।
- भारतीय संविधान में कल्याणकारी राज्य के दर्शन को अपनाया गया है, हालाँकि 'कल्याणकारी राज्य' शब्दावली का संविधान में कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया है।
- अनुसूचित जातियों के लगभग 90% लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं।
- 2011 की जनगणना के अनुसार, भारत की कुल जनसंख्या में 16.6% अनुसूचित जातियाँ और 8.6% अनुसूचित जनजातियाँ हैं।
- 'अनुसूचित जाति' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम साइमन कमीशन द्वारा किया गया।
- 2011 की जनगणना के अनुसार, नि:शक्त लोग कुल जनसंख्या का 2.21 प्रतिशत हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार अनौपचारिक श्रमिक वे हैं, जो बिना वैधानिक पंजीकरण के स्वनियोजित श्रमिक हैं।
- कल्याणकारी राज्य व्यक्तिवाद और समाजवाद में संतुलन स्थापित करता है। यह राज्य को न तो आवश्यक बुराई और न ही सर्वाधिक शक्तिशाली संस्था बताता है। इसमें राज्य को व्यक्तियों का 'मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक के रूप में देखा जाता है।'
- भारतीय संविधान की उद्देशिका में भारत को एक 'समाजवादी' राज्य घोषित किया गया है और यह शब्द अपने आप में सरकार की सामाजिक कल्याण के प्रति जवाबदेहिता को सुनिश्चित करता है।
- भारतीय संविधान के नीति-निदेशक तत्त्वों के अंतर्गत अनुच्छेद-38, 39, 39(क), 41, 42, 46, 47 आदि राज्य को सामाजिक कल्याण की अभिवृद्धि के लिये प्रेरित करते हैं।

अभ्यास प्रश्न (मुख्य परीक्षा)

1. सामाजिक न्याय की अवधारणा से आप क्या समझते हैं? चर्चा कीजिये।
2. 'एक कल्याणकारी राज्य' से आपका क्या अभिप्राय है? क्या भारत एक कल्याणकारी राज्य है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिये।
3. भारत में असुरक्षित, हाशिये पर स्थित और उपेक्षित समूह का अर्थ स्पष्ट करते हुए इनका वर्गीकरण कीजिये।
4. भारत में सामाजिक न्याय को प्रतिष्ठापित करने वाले संवैधानिक एवं विधिक प्रावधानों पर प्रकाश डालिये।

अध्याय
2

भारत में महिलाओं एवं बच्चों के संरक्षण हेतु प्रावधान (Provisions for the Protection of Women and Children in India)

एक महत्त्वपूर्ण मानव संसाधन के रूप में महिलाओं एवं बच्चों की महत्ता को भारतीय संविधान द्वारा मान्यता दी गई है। संविधान द्वारा न केवल महिलाओं को समानता प्रदान की गई है, बल्कि विशेष रूप से महिलाओं एवं बच्चों के सामाजिक-आर्थिक विकास के उपाय किये गए हैं। साथ ही उनके राजनीतिक अधिकारों एवं निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में उनकी भागीदारी को भी सुनिश्चित किया गया है। इसके अतिरिक्त इनके कल्याण हेतु सरकार द्वारा अनेक कल्याणकारी कार्यक्रमों एवं योजनाओं को भी क्रियान्वित किया जा रहा है।

2.1 भारतीय समाज में असुरक्षित समूह के रूप में महिलाएँ *(Women as Vulnerable Group in Indian Society)*

महिला सशक्तीकरण मुख्यतया तीन कारकों से निर्धारित होता है; उनकी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक पहचान तथा महत्ता। ये कारक परस्पर अंतर्संबंधित हैं। जब ये तीनों कारक एक साथ सुसंगत होकर इस दिशा में कार्य करें, केवल तभी सही अर्थों में महिला सशक्तीकरण को सुनिश्चित किया जा सकता है। इसलिये, महिलाओं का समग्र रूप से सशक्तीकरण सुनिश्चित करने के लिये उनके जीवन को प्रभावित करने वाले सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कारकों का प्रभावी समेकन अत्यावश्यक है।

असुरक्षित समुदायों के अंतर्गत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों की महिलाएँ दोहरे भेदभाव का सामना करती हैं; एक तो महिला होने के कारण तथा दूसरा पिछड़े समुदाय से संबंधित होने के कारण। इसी तरह एक नि:शक्त पुरुष के मुकाबले एक नि:शक्त महिला की कई विशिष्ट समस्याएँ होती हैं। हिंसा एवं यौन दुर्व्यवहार, दुर्व्यापार एवं बलात्कार की पीड़ित महिलाओं को बिल्कुल भिन्न लेकिन विशिष्ट पुनर्वास पैकेज की आवश्यकता होती है। किशोर लड़कियाँ अत्यंत असुरक्षित समूह के अंतर्गत आती हैं क्योंकि वे दुर्व्यापार, बलात्कार, बाल विवाह जैसे अत्याचारों का सामना करती हैं। तेज़ाब हमला, दहेज़ के लिये हत्या, पुत्र-संतान न होने पर अपमान जैसे दुर्व्यवहार केवल महिलाओं को ही सहने पड़ते हैं।

2.2 भारत में महिलाओं हेतु महत्त्वपूर्ण संवैधानिक एवं विधिक प्रावधान *(Important Constitutional and Legal Provisions for Women in India)*

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों तथा नीति-निदेशक सिद्धांतों में लैंगिक समानता के सिद्धांत को प्रतिष्ठापित किया गया है। संविधान न केवल महिलाओं के लिये समानता का प्रावधान करता है, बल्कि महिलाओं के पक्ष में 'सकारात्मक विभेद' अथवा आरक्षण की नीति अपनाने के लिये राज्य को प्राधिकृत भी करता है। एक लोकतांत्रिक राजनीतिक संरचना के अंतर्गत हमारे कानूनों, विकास नीतियों, योजनाओं एवं कार्यक्रमों का लक्ष्य विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं का विकास करना है। महिलाओं को समान अधिकार देने के उद्देश्य से भारत ने कई अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों तथा मानवाधिकार दस्तावेज़ों की अभिपुष्टि की है जिनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण 1993 का महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन संबंधी अभिसमय (Convention on Elimination of All forms of Discrimination Against Women – CEDAW) है।

अध्याय
3

अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों तथा अल्पसंख्यकों के संरक्षण हेतु प्रावधान (Provisions for the Protection of Scheduled Castes & Tribes, Other Backward Classes and Minorities)

जनगणना 2011 के अनुसार अनुसूचित जाति की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 16.6% है, जबकि 2001-11 के दौरान इसमें 20.8% की वृद्धि हुई है। ये वे लोग हैं जिन्हें अंतिम वर्ण, यानी 'शूद्र' अथवा 'अवर्ण' या 'अंत्यज' कहा जाता है। 'अस्पृश्य' या 'अंत्यज' कही जाने वाली इन जातियों की पहचान हेतु ब्रिटिश सरकार ने शोषित वर्ग (Depressed Class) शब्द का प्रयोग किया था जबकि इनके लिये 'अनुसूचित जाति' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम साइमन कमीशन द्वारा किया गया। तत्पश्चात् 1935 के भारत शासन अधिनियम में इसे शामिल किया गया ताकि सामाजिक-आर्थिक रूप से पीड़ित इस वर्ग को कुछ सुरक्षा उपलब्ध कराई जा सके। ये लोग उच्च जातियों के सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक भेदभाव के शिकार रहे हैं।

3.1 भारत में अनुसूचित जातियों की सुरक्षा हेतु संवैधानिक प्रावधान *(Constitutional Provisions for Scheduled Castes in India)*

अनुसूचित जातियों से संबंधित संवैधानिक प्रावधान *(Constitutional Provisions Related to SCs)*

(A) परिभाषा

- अनुच्छेद 341 — अनुसूचित जातियाँ
- अनुच्छेद 366(24) — अनुसूचित जातियों की स्पष्ट परिभाषा

(B) सामाजिक रक्षोपाय के मानक

- अनुच्छेद 17 — अस्पृश्यता का अंत
- अनुच्छेद 25 — अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता।

(C) शैक्षणिक, आर्थिक व लोक नियोजन संबंधी रक्षोपाय

- अनुच्छेद 15 — धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध
- अनुच्छेद 16 — लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता
- अनुच्छेद 46 — अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि
- अनुच्छेद 320 — लोक सेवा आयोगों के कृत्य
- अनुच्छेद 335 — सेवाओं और पदों के लिये अनुसूचित जातियों और जनजातियों के दावे

(D) राजनीतिक रक्षोपाय

- अनुच्छेद 330 — लोकसभा में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये स्थानों का आरक्षण
- अनुच्छेद 332 — राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिये स्थानों का आरक्षण
- अनुच्छेद 243घ — स्थानों का आरक्षण (पंचायतों में)
- अनुच्छेद 243न — स्थानों का आरक्षण (नगरपालिकाओं में)

(E) रक्षोपायों की निगरानी के लिये एजेंसी

- अनुच्छेद 338 — राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग

अध्याय
4

भारत में श्रमिकों के संरक्षण हेतु प्रावधान (Provisions for the Protection of Labourers in India)

18वीं और 19वीं शताब्दियों के दौरान यूरोप में औद्योगिक क्रांति के आगमन के साथ-साथ विश्व अर्थव्यवस्था में कारखाना श्रमिकों के एक नए वर्ग का उदय हुआ। औद्योगिक क्रांति की उत्पादन प्रक्रिया में पूंजी और श्रम उत्पादन के प्रमुख कारक थे। परिणामस्वरूप निजी अर्थव्यवस्था में उत्पादनकर्त्ताओं और कामगारों का उदय हुआ। जहाँ तक समाज के कल्याण का प्रश्न था, कामगारों के लिये श्रम के मानकों का पालन करना आवश्यक था और श्रम मानकों के अनुसार ही उन्हें श्रमिक कल्याण सुविधाएँ उपलब्ध करानी थीं। अत: 1919 में वर्साय की संधि के अधीन अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) की स्थापना हुई।

ILO के अनुसार संपूर्ण विश्व में श्रमिकों/कामगारों की बेहतरी हेतु कार्य के आयाम हैं- (i) श्रम कानून और श्रम अधिकारों के प्रति आदर, (ii) सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराना, (iii) समान कार्य हेतु समान वेतन, (iv) दुर्व्यवहार और शोषण के विरुद्ध सुरक्षा।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानक विभिन्न क्षेत्रों में श्रमिकों की सुरक्षा करते हैं। इन मानकों के अंतर्गत सहयोग की स्वतंत्रता, समान कार्य हेतु समान वेतन, सुरक्षित कार्य दशाएँ, बलात् श्रम और लिंग भेद की समाप्ति, रोज़गार संरक्षण, सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान, प्रवासी कामगारों का संरक्षण, महिला कामगारों के यौन शोषण का उन्मूलन आदि प्रावधान आते हैं।

4.1 भारत में श्रमिक *(Labourers in India)*

भारतीय श्रम बाज़ार की प्रकृति विरोधाभासी है जिसमें लगभग 90 प्रतिशत श्रमशक्ति असंगठित क्षेत्र में कार्यरत है और लगभग 10 प्रतिशत श्रमशक्ति संगठित क्षेत्र में कार्यरत है। असंगठित क्षेत्र में कार्य करने का एक बहुत बड़ा कारण औपनिवेशिक काल के बाद से आज तक मौजूद सामाजिक-आर्थिक कारक हैं। असंगठित कामगार की परिभाषा में ठेका श्रमिक, नैमित्तिक कामगार, घरों में कार्य करने वाले, घर पर रहकर कार्य करने वाले, कृषि कामगार, हाथ से मैला उठाने वाले, महिला और बालश्रमिक और वृद्ध मज़दूर आदि शामिल हैं। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की प्रमुख समस्याएँ इस प्रकार हैं-

- खराब कार्य दशाएँ
- न्यूनतम आय
- अकुशल श्रम
- तकनीक का न्यूनतम प्रयोग
- बाज़ार का कम ज्ञान
- शिक्षा एवं प्रशिक्षण तक कम पहुँच
- सामाजिक सुरक्षा मानकों का अभाव
- रोज़गार सुनिश्चितता और सुरक्षा तंत्र की कमी

भारत में श्रमिकों के प्रकार *(Types of Labourers in India)*

1. **कृषि श्रमिक**- औद्योगिक श्रम के विपरीत कृषि श्रमिकों को परिभाषित करना कठिन है। इसका कारण यह है कि जब तक कृषि में पूंजीवाद और औद्योगीकरण की जड़ें पूर्णत: जम नहीं जातीं, तब तक पूर्णत: वेतन (मज़दूरी) पर निर्भर एक पृथक् वर्ग नहीं उभर सकता।

   कृषि श्रमिकों को 4 वर्गों में बाँटा जा सकता है-

(i) भूमिहीन श्रमिक, जो भूस्वामियों से जुड़े हैं, (ii) भूमिहीन श्रमिक, जो व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्र हैं, परंतु बड़े भूस्वामियों के लिये काम करते हैं, (iii) छोटे कृषक, जिनके पास भूमि का छोटा टुकड़ा है और जो दूसरे भूस्वामियों के लिये कार्य करते हैं, (iv) बहुत छोटे कृषक, जिनके पास अत्यंत छोटा व सीमांत खेत होने के कारण उनकी मुख्य आजीविका दिहाड़ी मज़दूरी ही है।

कृषि श्रमिक अशिक्षित और अनभिज्ञ होते हैं। ये विभिन्न गाँवों में रहते हैं। अत: ये संघ नहीं बना सकते। अधिकांश कृषि श्रमिक निम्न जाति एवं वंचित वर्ग से हैं, इस कारण इनकी दशा और भी दयनीय है।

अध्याय
5

नि:शक्तता से पीड़ित लोगों के संरक्षण हेतु प्रावधान (Provisions for the Protection of People Suffering with Disabilities)

एक अनुमान के मुताबिक विश्व की लगभग 15 प्रतिशत जनसंख्या किसी-न-किसी रूप की नि:शक्तता या शारीरिक दुर्बलता से प्रभावित है। नि:शक्तता शब्द के कई अर्थ हैं। हालाँकि, मोटे तौर पर नि:शक्तता स्वास्थ्य में गिरावट का संकेत है। स्वास्थ्य को इसके विभिन्न कार्य क्षेत्रों, जैसे- गतिशीलता, पहचानने, सुनने एवं देखने की कार्यक्षमता की संकल्पना (विश्व स्वास्थ्य संगठन-2004) के रूप में समझा जा सकता है। वर्तमान में जनसंख्या वृद्धि, बुढ़ापा, उम्र बढ़ने तथा गंभीर बीमारियों के उभरने से नि:शक्त लोगों की संख्या बढ़ रही है।

5.1 विकलांग से दिव्यांग *(Viklang to Divyang)*

दिव्यांगजनों के कल्याण और सशक्तीकरण पर लक्षित विभिन्न नीतिगत मसलों पर ध्यान केंद्रित करने और संबंधित गतिविधियों पर सार्थक ज़ोर देने के लिये 12 मई, 2012 को सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय से अलग करके एक पृथक् डिसैबिलिटी कार्य विभाग बनाया गया था। हालाँकि दिसंबर, 2014 को इस विभाग का नाम बदलकर दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग कर दिया गया। वर्ष 2015 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लोगों से विकलांग की जगह दिव्यांग शब्द का प्रयोग करने की अपील की थी।

हालाँकि प्रमुख नि:शक्तजन आधारित संगठनों ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर 'विकलांग' शब्द के स्थान पर 'दिव्यांग' कहे जाने का विरोध किया। विरोध के पीछे का तर्क बताया जा रहा कि 'दिव्यांग' कह देने भर से उनके साथ होने वाला भेदभाव कम नहीं होगा जिसे वर्षों से दिव्यांग अपने जीवन में सहते आए हैं। इन संगठनों ने आगे लिखा कि सरकार को कलंक व भेदभाव के मुद्दे उठाने चाहियें कि दिव्यांग अपनी शारीरिक अक्षमताओं के बावजूद समाज और अर्थव्यवस्था में प्रभावी तरीके से अपनी भागीदारी निभाता है।

भारत "एशिया-प्रशांत में नि:शक्तजनों की बराबरी और पूर्ण भागीदारी से जुड़े समझौते" पर हस्ताक्षर कर चुका है। इसके अलावा भारत ने एक समावेशी, बाधारहित और अधिकारयुक्त समाज की दिशा में प्रयत्नशील "बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क" समझौते पर भी हस्ताक्षर किये हैं।

नि:शक्तता पर विश्व स्वास्थ्य संगठन *(World Health Organization on Disability)*

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने शारीरिक दुर्बलता, नि:शक्तता और असामर्थ्यता के बीच अंतर किया है।

शारीरिक दुर्बलता (Impairment) मनोवैज्ञानिक, शारीरिक या शरीर रचना या शारीरिक कार्यशैली में कमी या दुर्बलता है।

एक सामान्य व्यक्ति के लिये अपेक्षित कार्य दक्षता की तुलना में नि:शक्तता (Disability) किसी तरह का कार्य करने की क्षमता में रुकावट या कमी की स्थिति है (जो कि शारीरिक दुर्बलता से उत्पन्न होती है)।

असामर्थ्यता (Handicap) एक व्यक्ति के लिये प्रतिकूल परिस्थिति या अलाभ की स्थिति है जो कि शारीरिक दुर्बलता या नि:शक्तता से उत्पन्न होती है और उस भूमिका को पूरा करने से रोकती है जो उस व्यक्ति के लिये सामान्य समझी जाती है। ऐसा व्यक्ति की उम्र, लिंग या सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों पर निर्भर करता है।

2001 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कृत्य (Functioning), नि:शक्तता और स्वास्थ्य का अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण जारी किया। इसने मोटे तौर पर नौ कार्यों का वर्णन किया जिन्हें करने में नि:शक्त लोग कठिनाई का सामना करते हैं। जैसे-

- सीखना या ज्ञान का उपयोग करना
- सामान्य कार्य और मांगें
- संप्रेषण
- गतिशीलता

अध्याय
6

भारत में अन्य असुरक्षित समूहों के संरक्षण हेतु प्रावधान (Provisions for the Protection of Other Vulnerable Groups in India)

भारत में अन्य असुरक्षित समूहों के अंतर्गत प्रवासी श्रमिक, सेक्स वर्कर्स, एलजीबीटी समुदाय, एचआईवी/एड्स रोगी, वरिष्ठ नागरिक तथा मादक द्रव्य व्यसनी आदि समूह आते हैं। देश में इन समूहों के संरक्षण हेतु न केवल संविधान में प्रावधान किये गए हैं, बल्कि अनेक नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों एवं कानूनों द्वारा भी इनकी बेहतरी के प्रयास किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त इन समूहों के कल्याण हेतु अनेक अलग संस्थाओं का भी गठन किया गया है।

6.1 प्रवासी कामगार *(Migrant Workers)*

प्रवासी कामगारों के साथ प्रवास के दौरान सभी स्तरों पर विविध प्रकार का शोषण होने के कारण वे असुरक्षित होते हैं। विभिन्न सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों के कारण प्रवास का प्रभाव भी अलग-अलग प्रकार का हो सकता है। लगभग 232 मिलियन लोग, विश्व की जनसंख्या का 3.1%, अपने जन्म-स्थान से बाहर के देशों में रह रहे हैं। इस प्रवासी समूह में (3.1%) महिला प्रवासियों की संख्या लगभग आधी है। यह ज्ञात किया गया है कि प्रत्येक 8 प्रवासियों में से 1 प्रवासी 15-24 वर्ष के बीच का होता है। (अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार) पुरुष, महिलाएँ, बच्चे, किशोर और परिवार अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं को लाँघ रहे हैं, ताकि उनकी जीवन की दशाएँ सुधर सकें और उनका अस्तित्व बचा रहे। 1975 से वर्तमान के बीच आर्थिक विषमताओं, जनांकिकीय बदलाव, नागरिक युद्धों और प्राकृतिक आपदाओं के कारण अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी लोगों की संख्या लगभग दोगुनी हो गई है।

WEF (विश्व आर्थिक मंच) की एक रिपोर्ट के अनुसार 2015 तक भारत में जन्मे 15.6 मिलियन लोग दूसरे देशों में रह रहे थे। विदेश मंत्रालय के आँकड़ों के अनुसार विदेश प्रवासन में उत्तर प्रदेश सबसे आगे है।

प्रवासन की यह प्रक्रिया अंतर्राज्यीय स्तर पर भी काफी महत्त्वपूर्ण है। आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 के मुताबिक देश में लगभग 60 मिलियन अंतर्राज्यीय प्रवासी जनसंख्या है। उत्तर प्रदेश, बिहार जैसे राज्यों में यह प्रक्रिया अधिक दिखती है। 2001 की जनगणना आँकड़ों के मुताबिक उत्तर प्रदेश से निवल (Out-In) प्रवासी लगभग 2.6 लाख हैं।

हालाँकि भारत ने श्रम अधिकारों से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय मानकों की पुष्टि करके एक प्रशंसनीय काम किया है और साथ ही इस संबंध में भारतीय श्रम कानून भी पर्याप्त हैं, परंतु प्रमुख समस्या मौजूदा कानूनों और नियमों को लागू करने के स्तर पर है। भारत विशेषत: वंचित समुदाय के कामगारों के अधिकारों की निगरानी, श्रमिकों के प्रति दुर्व्यवहार और कार्यस्थल पर विभेद जैसी समस्याओं का सामना कर रहा है।

विभिन्न अवसंरचनात्मक नीतियों और कार्यक्रमों जैसे- JNNURM, MGNREGA और अन्य विकासपरक योजनाओं के उद्भव के साथ-साथ कामगारों और श्रमिकों का बड़े पैमाने पर अंतर्राज्यीय प्रवसन भी हुआ है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 64वें दौर के अनुसार भारत में श्रमिकों के प्रवास हेतु उत्तरदायी प्रमुख कारक हैं-

- क्षेत्रों के बीच आर्थिक विषमता।
- रोज़गार के बहुत ही कम अवसरों की उपलब्धता।
- प्राकृतिक आपदाएँ।
- विकास प्रेरित विस्थापन।
- समुदायों में संघर्ष की स्थिति।
- ग्रामीण क्षेत्र में कृषि में घटते निवेश के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर लोग औद्योगिक रूप से विकसित क्षेत्रों की ओर गमन कर रहे हैं।
- शहरी/औद्योगिक क्षेत्रों में श्रमिकों की अधिक मांग।

अध्याय
7

सरकारी नीतियों और विभिन्न क्षेत्रों में विकास से संबंधित विषय
(Issues Related to Government Policies & Development in Various Sectors)

स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले भारत में लैंगिक भेदभाव, समाज के कमज़ोर वर्गों के साथ असमान व्यवहार, निरक्षरता जैसी सामाजिक समस्याएँ नियमित रूप से विद्यमान थीं। इन्हीं समस्याओं से देश एवं समाज को निजात दिलाने का संकल्प, स्वतंत्रता प्राप्ति की पूर्व संध्या पर भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा दिये गए भाषण 'नियति से मिलन' (Tryst with Destiny) में स्पष्ट रूप से झलकता है, जिसमें तमाम सामाजिक-आर्थिक विषमताओं से मुक्त भावी भारत के निर्माण की कल्पना की गई थी।

इसी कल्पना के मद्देनज़र संविधान निर्माताओं ने सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक न्याय को संविधान की प्रस्तावना में न केवल स्थान दिया बल्कि 1955 में 'समाजवादी समाज' की स्थापना का लक्ष्य घोषित भी किया। साथ ही वर्तमान में सामाजिक न्याय की प्राप्ति हेतु विभिन्न वंचित वर्गों के कल्याण के लिये अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन भी किया जा रहा है।

7.1 भारत में सामाजिक न्याय एवं कल्याण हेतु नीतिगत प्रयास *(Policy Initiatives for Social Justice and Welfare in India)*

भारत में सामाजिक न्याय एवं कल्याण की दिशा में किये गए नीतिगत प्रयासों को समझने से पहले हमें स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व औपनिवेशिक शासन की कार्यप्रणालियों को समझना आवश्यक है। भारत में ब्रिटिश शासन का उद्देश्य आर्थिक शोषण एवं उसके मार्ग में आने वाली बाधाओं, जैसे कि सामुदायिक एकता, राष्ट्रीय चेतना, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा अन्य नागरिक अधिकारों की मांग को कमज़ोर करना था। अपने औपनिवेशिक हितों (आर्थिक शोषण) को साधने के लिये ब्रिटिश शासन ने भारत में सांप्रदायिक तत्त्वों को बढ़ावा दिया और इसीलिये विभिन्न नीतिगत प्रयासों के माध्यम से भारत के सांप्रदायिक सौहार्द्र को तोड़ने का प्रयास किया गया। यद्यपि, ब्रिटिश शासन द्वारा भारत में सामाजिक सुधार के रूप में कुछ वैधानिक प्रयास भी किये गए, जो कि निम्नलिखित हैं-

- 1833 ई. के चार्टर एक्ट के तहत जाति एवं वर्ण के आधार पर सरकारी नियोजन में भेदभाव को समाप्त कर दिया गया।
- 1833 ई. के चार्टर एक्ट के अंतर्गत ही भारत सरकार को दासों की अवस्था सुधारने और अंततः दासता समाप्त करने की आज्ञा दी गई।
- वर्ष 1829 के सती निषेध अधिनियम (Sati Abolition Act, 1829) के माध्यम से सती प्रथा पर प्रतिबंध लगाया गया।
- वर्ष 1830 में गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक द्वारा ठगी प्रथा का भी अंत कर दिया गया।
- गवर्नर जनरल लॉर्ड एलनबरो द्वारा 1843 ई. के अधिनियम के माध्यम से दास प्रथा का अंत किया गया।
- गवर्नर जनरल लॉर्ड हार्डिंग ने खोंड जनजाति में प्रचलित नरबलि प्रथा का दमन करने के लिये कैंपबेल की नियुक्ति की।
- 1854 ई. का शिक्षा पर चार्ल्स वुड का घोषणा-पत्र, शिक्षा में सुधार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना गया, जिसमें उच्च शिक्षा को अंग्रेज़ी भाषा के माध्यम से दिये जाने पर बल दिया गया, लेकिन साथ ही देशी भाषा के विकास को भी महत्त्व दिया गया। इसी तरह हंटर शिक्षा आयोग (1882-83) में भी सिफारिश की गई थी कि सरकार प्राथमिक शिक्षा के सुधार और विकास पर ध्यान दे तथा प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा उपलब्ध कराई जाए।

उपरोक्त कार्यवाहियों से स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन द्वारा भारत में सामाजिक सुधार का संबंध केवल कुछ कुरीतियों एवं कुप्रथाओं पर रोक लगाने तक ही सीमित था, जबकि सामाजिक कल्याण एवं सशक्तीकरण की दिशा में प्रयास करना कभी भी ब्रिटिश शासन की प्राथमिकता नहीं रही।

अध्याय
8

विकास, रणनीति और चुनौतियाँ (Development, Strategy and Challenges)

'विकास' की अवधारणा मूलत: उस अवस्थिति की द्योतक है, जो अपनी पूर्ववर्ती अवस्था से उच्चतर व प्रभावी होती है और प्राय: सुस्पष्ट रूप से प्रगतिशीलता एवं क्रमिकता को इंगित करती है। 'विकास' की अवधारणा के संबंध में सर्वप्रमुख तथ्य यह है कि इसे किसी एक क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं किया जा सकता बल्कि यह व्यापक रूप में आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और तकनीकी सभी क्षेत्रों से गहरे रूप में जुड़ा होता है, साथ ही साथ निश्चित रूप में एक क्षेत्र में हुआ विकास अन्य सभी क्षेत्रों को भी निरंतर प्रभावित करता है।

8.1 विकास का परिचय *(Introduction of Development)*

प्रचलित अर्थों में विकास को मूलत: अर्थव्यवस्था के इर्द-गिर्द माना जाता है और व्यापक अर्थों में विकास की चर्चा प्राय: आर्थिक विकास की रणनीति पर ही केंद्रित होती है। वर्तमान में यह पूर्णत: स्पष्ट है कि आर्थिक विकास का मूल आधार किसी भी देश की आर्थिक संवृद्धि है। यद्यपि यह स्पष्ट है कि आर्थिक विकास और आर्थिक संवृद्धि परस्पर पृथक् अवधारणाएँ हैं-

1. आर्थिक विकास, आर्थिक संवृद्धि से व्यापक है।
2. आर्थिक संवृद्धि में केवल परिमाणात्मक परिवर्तन स्पष्ट होते हैं, जबकि आर्थिक विकास में गुणात्मक व परिमाणात्मक दोनों परिवर्तन निहित होते हैं।
3. आर्थिक संवृद्धि मूलत: वस्तुनिष्ठ अवधारणा है, जबकि आर्थिक विकास व्यक्तिनिष्ठ अवधारणा है।
4. आर्थिक संवृद्धि जहाँ संख्यात्मक आँकड़ों का प्रदर्शन है, वहीं आर्थिक विकास व्यापक रूप में संस्थाओं में परिवर्तन, शिक्षा, साक्षरता दर, जीवन प्रत्याशा में वृद्धि आदि से स्पष्ट होता है।

विकास के इन्हीं तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए किसी भी राज-व्यवस्था द्वारा अपनी आर्थिक रणनीति व विकास प्रक्रिया का निर्धारण किया जाता है और इसी परिप्रेक्ष्य में भारतीय राज-व्यवस्था में 'मिश्रित अर्थव्यवस्था' मॉडल को अपनाया गया; 'समाजवादी समाज' की स्थापना का लक्ष्य घोषित किया गया और विकास के लाभों को अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाने (गांधीजी की शब्दावली) व प्रत्येक व्यक्ति को विकास प्रक्रिया में भागीदार बनाने के प्रयास किये गए और स्पष्ट शब्दों में 11वीं और 12वीं पंचवर्षीय योजना में 'समावेशी विकास' का लक्ष्य घोषित किया गया।

1991 में बदली परिस्थितियों के अनुरूप जब भारतीय अर्थव्यवस्था में 'निजीकरण, उदारीकरण व भूमंडलीकरण' की रणनीति अपनाई गई तब एक वर्ग द्वारा यह आक्षेप किया गया कि वर्तमान रणनीति, निजी हितों के प्रोत्साहन की रणनीति मात्र है और अब समाजवादी विकास, समानता, निर्धनता उन्मूलन को द्वितीयक बना दिया गया है, किंतु वास्तविक रूप में यह निष्कर्ष तथ्यों के पूर्णत: अनुरूप नहीं था। उल्लेखनीय है कि भारतीय राज्य का यह कदम एक रणनीति व परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकूल था तथा इसे केवल एक साधन के रूप में अपनाया गया है, जबकि 'समाजवादी समाज' अभी भी राज्य के साध्य के रूप में बना हुआ है और तीव्र विकास से प्राप्त लाभों का वितरण विभिन्न विकास योजनाओं, रोज़गार कार्यक्रमों, महिला व बाल विकास कार्यक्रमों आदि के माध्यम से किया गया है।

निर्धनता उन्मूलन, कुपोषण समाप्ति, संसाधनों का अनुकूलतम दोहन, आय-असमानता को न्यून करना, क्षेत्रीय विकास की असमानताओं की समाप्ति, समाज के सभी वर्गों का उत्थान, रोज़गार अवसरों का सृजन आदि विकास प्रक्रिया के मूल लक्ष्य माने जाते हैं और इन सभी को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित मुद्दे विकास की रणनीति से जुड़े हुए माने गए-

1. निजी अथवा सार्वजनिक क्षेत्र की प्राथमिकता का मुद्दा;
2. कृषि बनाम उद्योग की प्राथमिकता;
3. नियोजन रणनीति;

अध्याय
9

सामाजिक क्षेत्रक एवं सेवाओं का विकास और प्रबंधन (Development and Management of Social Sector & Services)

सामाजिक विकास, आर्थिक संवृद्धि के साधन तथा लोगों के जीवन स्तर में सुधार हेतु संपूर्ण समाज के रूपांतरण का माध्यम है। वास्तव में, सामाजिक विकास की संकल्पना मानव विकास की संकल्पना की अपेक्षा अधिक व्यापक है। जहाँ मानव विकास पृथकता की स्थिति में व्यक्ति विशेष की भलाई पर बल देता है, वहीं सामाजिक विकास व्यक्ति विशेष का अध्ययन सामाजिक परिस्थितियों के संदर्भ में करता है। इसका संबंध न केवल आधारभूत मानवीय क्षमताओं के विकास से है बल्कि सामाजिक अवसंरचना के स्तर, सामाजिक संस्थाओं की प्रकृति तथा सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया से भी है।

कुछ समय से विकास की अवधारणा में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है और सामाजिक विकास ने विकास की विचारधारा में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। इस नई विचारधारा का संबंध मुख्यत: 1995 में कोपेनहेगन में संपन्न हुए 'सामाजिक विकास पर शिखर सम्मेलन' तथा इसमें स्वीकार की गई उद्घोषणा एवं कार्यक्रमों से है। 1995 के कोपेनहेगन उद्घोषणा ने इस बात की नींव रखी कि समाज, सामाजिक सुदृढ़ता (Social solidarity), सामाजिक पूंजी, सामाजिक न्याय और सामाजिक हित विकास प्रक्रिया के अनिवार्य साझीदार होने चाहियें। वस्तुत: विकास का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति व समाज के हित में कार्य करना है। निर्धनता, बेरोज़गारी, लैंगिक विभेद, निरक्षरता और बीमारियों पर नियंत्रण अथवा उनमें कमी किये बिना विकास प्रक्रिया को 'समावेशी' व समतामूलक नहीं बनाया जा सकता। इसलिये स्थिर, सुरक्षित व न्यायपूर्ण समाज को विकसित करने के लिये कोपेनहेगन उद्घोषणा में निम्नांकित वचनबद्धताओं पर बल दिया गया है जैसे-

- प्रत्येक देश द्वारा एक लक्षित तिथि निर्धारित करके निर्धनता का पूर्ण रूप से उन्मूलन करना।
- एक बुनियादी नीतिगत लक्ष्य के रूप में रोज़गार को पूर्ण रूप से बढ़ावा देना।
- सभी मानवाधिकारों के संरक्षण व संवर्द्धन पर आधारित सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देना।
- महिलाओं व पुरुषों के मध्य समानता व समता की उपलब्धि अर्जित करना।
- अफ्रीका व अल्प-विकसित देशों के विकास को गति प्रदान करना।
- यह सुनिश्चित करना कि 'संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रमों' में सामाजिक विकास लक्ष्य भी शामिल हों।
- सामाजिक विकास के लिये आवंटित संसाधनों में वृद्धि करना।
- एक ऐसा आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व वैधानिक पर्यावरण निर्मित करना, जो लोगों को सामाजिक विकास की उपलब्धि में सहायता करे।
- शिक्षा एवं प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल तक सार्वभौमिक व समतामूलक पहुँच के लक्ष्य को प्राप्त करना।
- संयुक्त राष्ट्र संघ के ज़रिये सामाजिक विकास के लिये सहयोग को मज़बूती देना।

यदि उपरोक्त लक्ष्यों का विश्लेषण करें तो निष्कर्ष निकलता है कि विकास एकपक्षीय प्रक्रिया नहीं है। विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिये सकारात्मक हस्तक्षेपों की आवश्यकता है। ऐसे हस्तक्षेपकर्त्ताओं में राष्ट्रों की सरकारें, विभिन्न प्रशासनिक तंत्र, जनता, मीडिया व सिविल सोसाइटी संगठन व उनसे संबंधित सामाजिक कार्यकर्त्ता शामिल हैं।

9.1 सामाजिक क्षेत्रक *(Social Sector)*

किसी क्षेत्र के सामाजिक विकास का स्तर बहुत हद तक कुछ महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों के प्रदर्शन पर निर्भर करता है, जिन्हें संयुक्त रूप में सामाजिक क्षेत्रक के अंतर्गत शामिल किया जाता है। 'सामाजिक क्षेत्रक' शब्द का प्रयोग सामान्यत: ऐसे क्षेत्रों के संदर्भ में किया जाता है, जो लोगों के जीवन में सुधार की दृष्टि से अत्यावश्यक है। इसके अंतर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण जैसे क्षेत्रों के साथ-साथ निर्धनता उन्मूलन तथा अन्य सामाजिक कल्याण कार्यक्रम से संबंधित क्षेत्र शामिल हैं।

अध्याय
10

गरीबी और भूख से संबंधित विषय एवं राजनीतिक व्यवस्था के लिये इनका निहितार्थ (Issues Related to Hunger & Poverty and their Implications for the Political System)

आज के बच्चे ही कल युवा होंगे और देश की प्रगति, सुरक्षा एवं संरक्षण का दायित्व उनके कंधों पर होगा। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि हम अपने भविष्य को कैसे सुरक्षित रखें? इसके लिये आवश्यक है कि ये बच्चे शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर स्वस्थ और मज़बूत बनें। लेकिन वास्तविकता यह है कि कुपोषण की समस्या वर्तमान समय में विकराल रूप धारणा कर चुकी है। अनेक रिपोर्ट भारत में कुपोषण के गंभीर स्तर को दर्शाती हैं। हालाँकि इस स्थिति से निपटने के लिये सरकार अनेक प्रयास कर रही है।

10.1 कुपोषण *(Malnutrition)*

कुपोषण एक ऐसी अवस्था या दशा है जो एक साथ कई गंभीर समस्याओं की तरफ इशारा करती है। इसे सामान्यतया बच्चे अथवा वयस्क के वजन, शारीरिक व मानसिक वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव के संदर्भ में देखा जाता है। विश्व खाद्य कार्यक्रम (WFP) का मानना है कि एक कुपोषित व्यक्ति का शरीर सामान्य क्रियाकलाप करने (विशेषकर वृद्धि के संदर्भ में) में कठिनाई महसूस करता है और रोगों को रोक पाने में सक्षम नहीं होता। कुपोषण की स्थिति में शारीरिक कार्य करने में समस्या आती है, साथ ही सीखने की क्षमता (Learning Abilities) घटती जाती है। इस प्रकार स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि मानव स्वास्थ्य के लिये आवश्यक कुछ अथवा सभी पोषक तत्त्वों के अभाव की स्थिति को कुपोषण कहा जाता है। उल्लेखनीय है कि पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कुपोषण को राष्ट्रीय शर्म बताया था और फिल्म अभिनेता आमिर खान ने भी इस संदर्भ में 'कुपोषण भारत छोड़ो' अभियान शुरू किया है। कुपोषण पर जारी 'हंगामा' रिपोर्ट भारत में कुपोषण की भयावहता को प्रकट करती है। कुपोषण मुख्यतया दो रूपों में देखा जाता है। प्रथम, प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण व द्वितीय, सूक्ष्मपोषक (Micro Nutrient) जिसमें विटामिन व खनिज की कमी से होने वाला कुपोषण शामिल है।

कुपोषण का प्रभाव

- शरीर को आवश्यक संतुलित आहार लंबे समय तक नहीं मिलने से बच्चों और महिलाओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, जिससे वे आसानी से कई तरह की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।
- बच्चों और स्त्रियों के अधिकांश रोगों की जड़ में कुपोषण ही है। स्त्रियों में रक्ताल्पता या घेंघा रोग अथवा बच्चों में सूखा रोग या रतौंधी और यहाँ तक कि अंधापन भी कुपोषण का ही दुष्परिणाम है।
- कुपोषण बच्चों को सबसे अधिक प्रभावित करता है। यह जन्म के बाद या उससे भी पहले शुरू हो जाता है और 6 महीने से 3 वर्ष की आयु वाले बच्चों में तीव्रता से बढ़ता है।
- सबसे भयंकर परिणाम इसके द्वारा होने वाला आर्थिक नुकसान है। कुपोषण के कारण मानव उत्पादकता 10-15 प्रतिशत तक कम हो जाती है जो सकल घरेलू उत्पाद को 5-10 प्रतिशत कम कर सकता है।

कुपोषण के आँकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के 2015-16 और 2005-06 के तीसरे और चौथे चक्र से प्राप्त आँकड़ों का उपयोग करते हुए पाँच साल से कम उम्र के बच्चों के लिये पोषण संकेतकों के बीच किया गया तुलनात्मक अध्ययन यह दर्शाता है कि-

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS
YouTube Drishti IAS
drishtiias
drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456